अध्याय - ११

सगुण ब्रह्म श्रीसाईबाबा, डॉक्टर पंडित का पूजन, हाजी सिद्दीक फालके, तत्त्वों पर नियंत्रण।

इस अध्याय में अब हम श्रीसाईबाबा के सगुण ब्रह्म स्वरूप, उनका पूजन तथा तत्त्वनियंत्रण का वर्णन करेंगे।

सगुण ब्रह्म श्रीसाईबाबा

ब्रह्म के दो स्वरूप हैं - निर्गुण और सगुण। निर्गुण निराकार है और सगुण साकार है। यद्यपि वे एक ही ब्रह्म के दो रूप हैं, फिर भी किसी को निर्गुण और किसी को सगुण उपासना में दिलचस्पी होती है, जैसा कि गीताके अध्याय १२ में वर्णन किया गया है। सगुण उपासना सरल और श्रेष्ठ है। मनुष्य स्वयं आकार (शरीर, इन्द्रिय आदि) में है, इसीलिये उसे ईश्वर की साकार उपासना स्वभावतः ही सरल है। जब तक कुछ काल सगुण ब्रह्म की उपासना न की जाये, तब तक प्रेम और भक्ति में वृद्धि ही नहीं होती। सगुणोपासना में जैसे-जैसे हमारी प्रगति होती जाती है, हम निर्गुण ब्रह्म की ओर अग्रसर होते जाते हैं। इसलिये सगुण उपासना से ही श्रीगणेश करना अति उत्तम है। मूर्ति, वेदी, अग्नि, प्रकाश, सूर्य, जल और ब्राह्मण आदि सप्त उपासना की वस्तुएँ होते हुए भी, सद्गुरु ही इन सभी में श्रेष्ठ है।

श्रीसाई का स्वरूप आँखों के सम्मुख लाओ, जो वैराग्य की प्रत्यक्ष मूर्त्ति और अनन्य शरणागत भक्तों के आश्रयदाता हैं। उनके शब्दों में विश्वास लाना ही आसन और उनके पूजन का संकल्प करना ही समस्त इच्छाओं का त्याग है।

कोई-कोई श्रीसाईबाबा की गणना भगवद्भक्त अथवा एक महाभागवत (महान् भक्त) में करते थे या करते हैं। परन्तु हम लोगों के लिये तो वे ईश्वरावतार हैं। वे

अत्यन्त क्षमाशील, शान्त, सरल और सन्तुष्ट थे, जिसकी कोई उपमा ही नहीं दी जा सकती। यद्यपि वे शरीरधारी थे, पर यथार्थ में निर्गुण, निराकार, अनन्त और नित्यमुक्त थे। गंगा नदी समुद्र की ओर जाती हुई मार्ग में ग्रीष्म से व्यथित अनेकों प्राणियों को शीतलता पहुँचा कर आनन्दित करती, फसलों और वृक्षों को जीवन-दान देती और जिस प्रकार प्राणियों की क्षुधा शान्त करती है, उसी प्रकार श्रीसाई सन्त-जीवन व्यतीत करते हुए भी दूसरों को सान्त्वना और सुख पहुँचाते हैं। भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा है "संत ही मेरी आत्मा हैं। वे मेरी जीवित प्रतिमा और मेरे ही विशुद्ध रूप है। मैं स्वयं वही हूँ।" यह अवर्णनीय शक्तियाँ या ईश्वर की शक्ति, जो कि सत्, चित् और आनन्द है, शिरडी में साई रूप में अवतीर्ण हुई थीं। श्रुति (तैतिरीय उपनिषद्) में ब्रह्म को आनन्द कहा गया है। अभी तक यह विषय केवल पुस्तकों में पढ़ते और सुनते थे; परन्तु भक्तगण ने शिरडी में इस प्रकार का प्रत्यक्ष आनन्द पा लिया है।. बाबा सब के आश्रयदाता थे, उन्हें किसी की सहायता की आवश्यकता न थी। उनके बैठने के लिये भक्तगण एक मुलायम आसन और एक बड़ा तकिया लगा देते थे। बाबा भक्तों के भावों का आदर करते और उनकी इच्छानुसार पूजनादि करने देने में किसी प्रकार की आपत्ति न करते थे। कोई उनके सामने चँवर डुलाते, कोई वाद्य बजाते और कोई पादप्रक्षालन करते थे। कोई इत्र और चन्दन लगाते; कोई सुपारी, पान और अन्य वस्तुएँ भेंट करते और कोई नैवेद्य ही अर्पित करते थे। यद्यपि ऐसा जान पड़ता था कि उनका निवासस्थान शिरडी में है, परन्तु वे तो सर्वव्यापक थे। इसका भक्तों ने नित्य प्रति अनुभव किया। ऐसे सर्वव्यापक गुरुदेव के चरणों में मेरा बार-बार नमस्कार है।

डॉक्टर पंडित की भक्ति

एक बार श्री तात्या नूलकर के मित्र डॉक्टर पंडित बाबा के दर्शनार्थ शिरडी पधारे। बाबा को प्रणाम कर वे मसजिद में कुछ देर तक बैठे। बाबा ने उन्हें श्री दादा भट केलकर के पास भेजा, जहाँ पर उनका अच्छा स्वागत हुआ। फिर दादा भट और डॉ. पंडित एक साथ पूजन के लिये मसजिद पहुँचे। दादा भट ने बाबा का पूजन किया। बाबा का पूजन तो प्रायः सभी किया करते थे, परन्तु अभी तक उनके शुभ मस्तक पर चन्दन लगाने का किसी ने भी साहस नहीं किया था। केवल एक म्हालसापति ही उनके गले में चन्दन लगाया करते थे। डॉ. पंडित ने पूजन की थाली में से चन्दन लेकर बाबा के मस्तक पर त्रिपुण्डाकार लगाया। लोगों ने महान् आश्चर्य से देखा कि बाबा ने एक शब्द भी नहीं कहा। सन्ध्या समय दादा भट ने बाबा से पूछा, "क्या कारण है कि आप

दूसरों को तो मस्तक पर चन्दन नहीं लगाने देते, परन्तु डॉक्टर पंडित को आपने कुछ भी नहीं कहा?" बाबा कहने लगे, "डॉ. पंडित ने मुझे अपने गुरु श्री रघुनाथ महाराज धोपेश्वरकर, जो कि काका पुराणिक के नाम से प्रसिद्ध हैं, के ही समान समझा और अपने गुरु को वे जिस प्रकार चन्दन लगाते थे, उसी भावना से उन्होंने मुझे चन्दन लगाया। तब मैं कैसे रोक सकता था?" पूछने पर डॉ. पंडित ने दादा भट से कहा कि मैंने बाबा को अपने गुरु काका पुराणिक के समान ही जानकर उन्हें त्रिपुण्डाकार चन्दन लगाया है, जिस प्रकार मैं अपने गुरु को सदैव लगाया करता था।

यद्यपि बाबा भक्तों को उनकी इच्छानुसार ही पूजन करने देते थे, परन्तु कभी-कभी तो उनका व्यवहार विचित्र ही हो जाया करता था। जब कभी वे पूजन की थाली फेंक कर रुद्रावतार धारण कर लेते, तब उनके समीप जाने का साहस ही किसी को न हो सकता था। कभी वे भक्तों को झिड़कते और कभी मोम से भी नरम होकर शान्ति तथा क्षमा की मूर्त्ति-से प्रतीत होते थे। कभी-कभी वे क्रोधावस्था में कम्पायमान हो जाते और उनके लाल नेत्र चारों ओर घूमने लगते थे, तथापि उनके अन्तःकरण में प्रेम और मातृ-स्नेह का स्रोत बहा ही करता था। भक्तों को बुलाकर वे कहा करते थे कि उन्हें तो कुछ ज्ञात ही नहीं है कि वे कब उनपर क्रोधित हुए। यदि यह सम्भव हो कि माताएँ अपने बालकों को ठुकरा दें और समुद्र नदियों को लौटा दे तो ही वे भक्तों के कल्याण की भी उपेक्षा कर सकते हैं। वे तो भक्तों के समीप ही रहते हैं और जब भक्त उन्हें पुकारते हैं तो वे तुरन्त ही उपस्थित हो जाते हैं। वे तो सदा भक्तों के प्रेम के भूखे हैं।

हाजी सिद्दीक फालके

यह कोई नहीं कह सकता था कि कब श्री साईबाबा अपने भक्त को अपना कृपापात्र बना लेंगे। यह उनकी सदिच्छा पर निर्भर था। हाजी सिद्दीक फालके की कथा इसी का उदाहरण है। कल्याणनिवासी एक यवन, जिनका नाम सिद्दीक फालके था, मक्का शरीफ की हज करने के बाद शिरडी आये। वे चावड़ी में उत्तर की ओर रहने लगे। वे मसजिद के सामने खुले आँगन में बैठा करते थे। बाबा ने उन्हें ९ माह तक मसजिद में प्रविष्ट होने की आज्ञा न दी और न ही मसजिद की सीढ़ी चढ़ने दी। फालके बहुत निराश हुए और कुछ निर्णय न कर सके कि कौनसा उपाय काम में लायें। लोगों ने उन्हें सलाह दी कि आशा न त्यागो। शामा श्रीसाईबाबा के अंतरंग भक्त हैं। तुम उनके ही द्वारा बाबा के पास पहुँचने का प्रयत्न करो। जिस प्रकार भगवान शंकर के पास पहुँचने के लिये नन्दी के पास जाना आवश्यक होता है, उसी प्रकार बाबा के पास भी

शामा के द्वारा ही पहुँचना चाहिये। फालके को यह विचार उचित प्रतीत हुआ और उन्होंने शामा से सहायता की प्रार्थना की। शामा ने भी आश्वासन दे दिया और अवसर पाकर वे बाबा से इस प्रकार बोले कि, "बाबा, आप उस बूढ़े हाजी को मसजिद में किस कारण नहीं आने देते? अनेक भक्त स्वेच्छापूर्वक आपके दर्शन को आया-जाया करते हैं। कम से कम एक बार तो उसे आशीष दे दो।" बाबा बोले, "शामा, तुम अभी नादान हो। यदि फकीर (अल्लाह) नहीं आने देता है तो मैं क्या करूँ? उनकी कृपा के बिना कोई भी मसजिद की सीढ़ियाँ नहीं चढ़ सकता। अच्छा, तुम उससे पूछ आओ कि क्या वह बारवी कुएँ की निचली पगडंडी पर आने को सहमत है?" शामा स्वीकारात्मक उत्तर लेकर पहुँचे। फिर बाबा ने पुनः शामा से कहा कि उससे फिर पूछो कि "क्या वह मुझे चार किश्तों में चालीस हजार रुपये देने को तैयार है?" फिर शामा उत्तर लेकर लौटे कि "आप कहें तो मैं चालीस लाख रुपये देने को तैयार हूँ।" "मैं मसजिद में एक बकरा हलाल करने वाला हूँ, उससे पूछो कि उसे क्या रुचिकर होगा - बकरे का मांस, नाध या अंडकोष?" शामा यह उत्तर लेकर लौटे कि "यदि बाबा के भोजन-पात्र में से एक ग्रास भी मिल जाय तो हाजी अपने को सौभाग्यशाली समझेगा।" यह उत्तर पाकर बाबा उत्तेजित हो गये और उन्होंने अपने हाथ से मिट्टी का बर्तन (पानी की गागर) उठाकर फेंक दी और अपनी कफनी उठाये हुए सीधे हाजी के पास पहुँचे। वे उनसे कहने लगे कि "व्यर्थ ही नमाज क्यों पढ़ते हो? अपनी श्रेष्ठता का प्रदर्शन क्यों करते हो? यह वृद्ध हाजियों के समान वेशभूषा तुमने क्यों धारण की है? क्या तुम कुरान शरीफ़ का इसी प्रकार पठन करते हो? तुम्हें अपने मक्का हज का अभिमान हो गया है, परन्तु तुम मुझसे अनभिज्ञ हो।" इस प्रकार डाँट सुनकर हाजी घबड़ा गया। बाबा मसजिद को लौट आये और कुछ आमों की टोकरियाँ खरीद कर हाजी के पास भेज दीं। वे स्वयं भी हाजी के पास गये और अपने पास से ५५ रुपये निकाल कर हाजी को दिये। इसके बाद से ही बाबा हाजी से प्रेम करने लगे तथा अपने साथ भोजन करने को बुलाने लगे। अब हाजी भी अपनी इच्छानुसार मसजिद में आने-जाने लगे। कभी-कभी बाबा उन्हें कुछ रुपये भी भेंट में दे दिया करते थे। इस प्रकार हाजी बाबा के दरबार में सम्मिलित हो गये।

बाबा का तत्त्वों पर नियंत्रण

बाबा के तत्त्व-नियंत्रण की दो घटनाओं के उल्लेख के साथ ही यह अध्याय समाप्त हो जायेगा।

(१) एक बार सन्ध्या समय शिरडी में भयानक झंझावात आया। आकाश में घने और काले बादल छाये हुये थे। पवन झकोरों से बह रहा था। बादल गरजते और बिजली चमक रही थी। मूसलाधार वर्षा प्रारंभ हो गई। जहाँ देखो, वहाँ जल ही जल दृष्टिगोचर होने लगा। सब पशु, पक्षी और शिरडीवासी अधिक भयभीत होकर मसजिद में एकत्रित हुए। शिरडी में देवियाँ तो अनकों हैं, परन्तु उस दिन सहायतार्थं कोई न आईं। इसलिये सभी ने अपने भगवान साई से, जो भक्ति के ही भूखे थे, संकट-निवारण करने की प्रार्थना की। बाबा को भी दया आ गई और वे बाहर निकल आये। मसजिद के समीप खड़े होकर उन्होंने बादलों की ओर दृष्टि कर गरजते हुए शब्दों में कहा कि "बस, शांत हो जाओ।" कुछ समय के बाद ही वर्षा का जोर कम हो गया और पवन मन्द पड़ गया तथा आँधी भी शान्त हो गई। आकाश में चन्द्र देव उदित हो गये। तब सब लोग अति प्रसन्न होकर अपने-अपने घर लौट आये।

(२) एक अन्य अवसर पर मध्याह्न के समय धूनी की अग्नि इतनी प्रचण्ड होकर जलने लगी कि उसकी लपटें ऊपर छत तक पहुँचने लगीं। मसजिद में बैठे हुए लोगों की समझ में न आता था कि जल डाल कर अग्नि शांत कर दें अथवा कोई अन्य उपाय काम में लावें। बाबा से पूछने का साहस भी कोई नहीं कर पा रहा था।

परन्तु बाबा शीघ्र परिस्थिति को जान गये। उन्होंने अपना सटका उठाकर सामने के खम्भे पर बलपूर्वक प्रहार किया और बोले "नीचे उतरो और शान्त हो जाओ।" सटके की प्रत्येक ठोकर पर लपटें कम होने लगीं और कुछ मिनटों में ही धूनी शान्त और यथापूर्व हो गई। श्रीसाई ईश्वर के अवतार हैं। जो उनके सामने नत हो उनके शरणागत होगा, उस पर वे अवश्य कृपा करेंगे। जो भक्त इस अध्याय की कथायें प्रतिदिन श्रद्धा और भक्तिपूर्वक पठन करेगा, उसका दुःखों से शीघ्र ही छुटकारा हो जायेगा। केवल इतना ही नहीं, वरन् उसे सदैव श्रीसाई चरणों का स्मरण बना रहेगा और उसे अल्प काल में ही ईश्वर-दर्शन की प्राप्ति होकर, उसकी समस्त इच्छायें पूर्ण हो जायेंगी और इस प्रकार वह निष्काम बन जायेगा।

॥ श्री सद्गुरु साईनाथार्पणमस्तु। शुभं भवतु ॥

अध्याय - १२

(१) काका महाजनी (२) धुमाल वकील (३) श्रीमती निमोणकर (४) मुले शास्त्री (५) एक डॉक्टर के द्वारा बाबा की लीलाओं का अनुभव।

इस अध्याय में-बाबा किस प्रकार भक्तों से भेंट करते और कैसा बर्ताव करते थे, इसका वर्णन किया गया है।

सन्तों का कार्य

हम देख चुके हैं कि ईश्वरीय अवतार का ध्येय साधुजनों का परित्राण और दुष्टों का संहार करना है। परन्तु संतों का कार्य तो सर्वथा भिन्न ही है। सन्तों के लिए साधु और दुष्ट प्रायः एक समान ही हैं। यथार्थ में उन्हें दुष्कर्म करने वालों की प्रथम चिन्ता होती है और वे उन्हें उचित पथ पर लगा देते हैं। वे भवसागर के कष्टों को सोखने के लिए अगस्त्य के सदृश हैं और अज्ञान तथा अंधकार का नाश करने के लिए सूर्य के समान हैं। सन्तों के हृदय में भगवान् वासुदेव निवास करते हैं। वे उनसे पृथक् नहीं हैं। श्रीसाई भी उसी कोटि में हैं, जो कि भक्तों के कल्याण के निमित्त ही अवतीर्ण हुए थे। वे ज्ञानज्योति स्वरूप थे और उनकी दिव्यप्रभा अपूर्व थी। उन्हें समस्त प्राणियों से समान प्रेम था। वे निष्काम तथा नित्यमुक्त थे। उनकी दृष्टि में शत्रु, मित्र, राजा और भिक्षुक सब एक समान थे। पाठको! अब कृपया उनका पराक्रम श्रवण करें। भक्तों के लिये उन्होंने अपना दिव्य गुणसमूह पूर्णतः प्रयोग किया और सदैव उनकी सहायता के लिये तत्पर रहे। उनकी इच्छा के बिना कोई भक्त उनके पास पहुँच ही न सकता था। यदि उनके शुभ कर्म उदित नहीं हुए हैं तो उन्हें बाबा की स्मृति भी कभी नहीं आई और न ही उनकी लीलायें उनके कानों तक पहुँच सकीं। तब फिर बाबा के दर्शनों का विचार भी उन्हें कैसे आ सकता था? अनेक व्यक्तियों की श्रीसाईबाबा के दर्शन की इच्छा होते हुए भी उन्हें बाबा के महासमाधि लेने तक कोई योग प्राप्त न हो सका। अतः **ऐसे व्यक्ति जो दर्शनलाभ से वंचित रहे हैं, यदि वे श्रद्धापूर्वक साईलीलाओं का**

श्रवण करेंगे तो उनकी साई-दर्शन की इच्छा बहुत कुछ अंशों तक तृप्त हो जायेगी। भाग्यवश यदि किसी को किसी प्रकार बाबा के दर्शन हो भी गये तो वह वहाँ अधिक ठहर न सका। इच्छा होते हुए भी केवल बाबा की आज्ञा तक ही वहाँ रुकना संभव था और आज्ञा होते ही स्थान छोड़ देना आवश्यक हो जाता था। अतः यह सब उनकी शुभ इच्छा पर ही अवलंबित था।

काका महाजनी

एक समय काका महाजनी बम्बई से शिरडी पहुँचे। उनका विचार एक सप्ताह ठहरने और गोकुल अष्टमी उत्सव में सम्मिलित होने का था। दर्शन करने के बाद बाबा ने उनसे पूछा, "तुम कब वापस जाओगे?" उन्हें बाबा के इस प्रश्न पर आश्चर्य-सा हुआ। उत्तर देना तो आवश्यक ही था, इसलिये उन्होंने कहा, "जब बाबा आज्ञा दें।" बाबा ने अगले दिन जाने को कहा। बाबा के शब्द कानून थे, जिनका पालन करना नितान्त आवश्यक था। काका महाजनी ने तुरन्त ही प्रस्थान किया। जब वे बम्बई में अपने आफिस में पहुँचे तो उन्होंने अपने सेठ को अति उत्सुकतापूर्वक प्रतीक्षा करते पाया। मुनीम के अचानक ही अस्वस्थ हो जाने के कारण काका की उपस्थिति अनिवार्य हो गई थी। सेठ ने शिरडी को जो पत्र काका के लिये भेजा था, वह बम्बई के पते पर उनको वापस लौटा दिया गया।

भाऊसाहेब धुमाल

अब एक विपरीत कथा सुनिये। एक बार भाऊसाहेब धुमाल एक मुकदमे के सम्बन्ध में निफाड़ के न्यायालय को जा रहे थे। मार्ग में वे शिरडी उतरे। उन्होंने बाबा के दर्शन किये और तत्काल ही निफाड़ को प्रस्थान करने लगे, परन्तु बाबा की स्वीकृति प्राप्त न हुई। उन्होंने उन्हें शिरडी में एक सप्ताह और रोक लिया। इसी बीच में निफाड़ के न्यायाधीश उदर-पीड़ा से ग्रस्त हो गये। इस कारण उनका मुकदमा किसी अगले दिन के लिये बढ़ाया गया। एक सप्ताह बाद भाऊसाहेब को लौटने की अनुमति मिली। इस मामले की सुनवाई कई महीनों तक और चार न्यायाधीशों के पास हुई। फलस्वरूप धुमाल ने मुकदमे में सफलता प्राप्त की और उनका मुवक्किल मामले में बरी हो गया।

श्रीमती निमोणकर

श्री नानासाहेब निमोणकर, जो निमोण के निवासी और अवैतनिक न्यायाधीश थे, शिरडी में अपनी पत्नी के साथ ठहरे हुए थे। निमोणकर तथा उनकी पत्नी बहुत-सा

समय बाबा की सेवा और उनकी संगति में व्यतीत किया करते थे। एक बार ऐसा प्रसंग आया कि उनका पुत्र बेलापुर में रोग से पीड़ित हो गया। तब उसकी माता ने वहाँ जाकर अपने पुत्र और अन्य संबंधियों से मिलने तथा कुछ दिन वहीं व्यतीत करने का निश्चय किया। परन्तु श्री. नानासाहेब ने दूसरे दिन ही उन्हें लौट आने को कहा। वे असमंजस में पड़ गईं कि अब क्या करना चाहिए, परन्तु बाबा ने सहायता की। शिरडी से प्रस्थान करने के पूर्व वे बाबा के पास गईं। बाबा साठेवाड़ा के समीप नानासाहेब और अन्य लोगों के साथ खड़े हुये थे। उन्होंने जाकर चरणवन्दना की और प्रस्थान करने की अनुमति माँगी। बाबा ने उनसे कहा, "शीघ्र जाओ, घबड़ाओ नहीं; शान्त चित्त से बेलापुर में चार दिन सुखपूर्वक रहकर सब सम्बन्धियों से मिलो और तब शिरडी आ जाना।" बाबा के शब्द कितने सामयिक थे। श्री. निमोणकर की आज्ञा बाबा द्वारा रद्द हो गई।

नासिक के मुले शास्त्रीः ज्योतिषी

नासिक के एक कर्मनिष्ठ, अग्रिहोत्री ब्राह्मण थे, जिनका नाम मुले शास्त्री था। इन्होंने छः शास्त्रों का अध्ययन किया था और ज्योतिष तथा सामुद्रिक शास्त्र में भी पारंगत थे। वे एक बार नागपुर के प्रसिद्ध करोड़पति श्री. बापूसाहेब बूटी से भेंट करने के बाद अन्य सज्जनों के साथ बाबा के दर्शन करने मसजिद में गये। बाबा ने फल बेचने वाले से अनेक प्रकार के फल और अन्य पदार्थ खरीदे और मसजिद में उपस्थित लोगों में उनको वितरित कर दिया। बाबा आम को इतनी चतुराई से चारों ओर से दबा देते थे कि चूसते ही सम्पूर्ण रस मुँह में आ जाता तथा गुठली और छिलका तुरन्त फेंक दिया जा सकता था। बाबा ने केले छीलकर भक्तों में बाँट दिये और उनके छिलके अपने लिये रख लिये। हस्तरेखा विशारद होने के नाते, मुले शास्त्री ने बाबा के हाथ की परीक्षा करने की प्रार्थना की। परन्तु बाबा ने उनकी प्रार्थना पर कोई ध्यान न देकर उन्हें चार केले दिये। इसके बाद सब लोग वाड़े को लौट आये। अब मुले शास्त्री ने स्नान किया और पवित्र वस्त्र धारण कर अग्रिहोत्र आदि में जुट गये। बाबा भी अपने नियमानुसार लेण्डी को रवाना हो गये। जाते-जाते उन्होंने कहा कि कुछ गेरू लाना, आज भगवा वस्त्र रँगेंगे। बाबा के शब्दों का अभिप्राय किसी की समझ में न आया। कुछ समय के बाद बाबा लौटे। अब मध्याह्न बेला की आरती की तैयारियाँ प्रारम्भ हो गई थीं। बापूसाहेब जोग ने मुले से आरती में साथ करने के लिये पूछा। उन्होंने उत्तर दिया कि वे सन्ध्या समय बाबा के दर्शनों को जायेंगे। तब जोग अकेले ही चले गये। बाबा के आसन ग्रहण करते ही भक्त लोगों ने उनकी पूजा की। अब आरती प्रारम्भ हो गई। बाबा ने

कहा, "उस नये ब्राह्मण से कुछ दक्षिणा लाओ"। बूटी स्वयं दक्षिणा लेने को गये और उन्होंने बाबा का सन्देश मुले शास्त्री को सुनाया। वे बुरी तरह घबड़ा गये। वे सोचने लगे कि "मैं तो एक अग्निहोत्री ब्राह्मण हूँ, फिर मुझे दक्षिणा देना क्या उचित है? माना कि बाबा महान् संत हैं, परन्तु मैं तो उनका शिष्य नहीं हूँ।" फिर भी उन्होंने सोचा कि जब बाबा सरीखे महान् संत दक्षिणा माँग रहे हैं और बूटी सरीखे एक करोड़पति लेने को आये हैं तो वे अवहेलना कैसे कर सकते हैं? इसलिये वे अपने कृत्य को अधूरा ही छोड़कर तुरन्त बूटी के साथ मसजिद को गये। वे अपने को शुद्ध और पवित्र तथा मसजिद को अपवित्र जानकर, कुछ अन्तर से खड़े हो गये और दूर से ही हाथ जोड़कर उन्होंने बाबा के ऊपर पुष्प फेंके। एकाएक उन्होंने देखा कि बाबा के आसन पर उनके कैलासवासी गुरु घोलप स्वामी विराजमान हैं। अपने गुरु को वहाँ देखकर उन्हें महान् आश्चर्य हुआ। कहीं यह स्वप्न तो नहीं है? नहीं! नहीं! यह स्वप्न नहीं है। मैं पूर्ण जागृत हूँ। परन्तु जागृत होते हुये भी, मेरे गुरु महाराज यहाँ कैसे आ पहुँचे? कुछ समय तक उनके मुँह से एक भी शब्द न निकला। उन्होंने अपने को चिकोटी ली और पुनः विचार किया। परन्तु वे निर्णय न कर सके कि कैलासवासी गुरु घोलप स्वामी मसजिद में कैसे आ पहुँचे? फिर सब सन्देह दूर करके वे आगे बढ़े और गुरु के चरणों पर गिर हाथ जोड़ कर स्तुति करने लगे। दूसरे भक्त तो बाबा की आरती गा रहे थे, परन्तु मुले शास्त्री अपने गुरु के नाम की ही गर्जना कर रहे थे। फिर सब जातिपाँति का अहंकार तथा पवित्रता और अपवित्रता की कल्पना त्याग कर वे गुरु के श्रीचरणों पर पुनः गिर पड़े। उन्होंने आँखें मूँद लीं; परंतु खड़े होकर जब उन्होंने आँखें खोलीं तो बाबा को दक्षिणा माँगते हुए देखा। बाबा का आनन्दस्वरूप और उनकी अनिर्वचनीय शक्ति देख मुले शास्त्री आत्मविस्मृत हो गये। उनके हर्ष का पारावार न रहा। उनकी आँखें अश्रुपूरित होते हुए भी प्रसन्नता से नाच रही थीं। उन्होंने बाबा को पुनः नमस्कार किया और दक्षिणा दी। मुले शास्त्री कहने लगे कि "मेरे सब संशय दूर हो गये। आज मुझे अपने गुरु के दर्शन हुए।" बाबा की यह अद्‌भुत लीला देखकर सब भक्त और मुले शास्त्री द्रवित हो गये। "गेरू लाओ, आज भगवा वस्त्र रँगेंगे" – बाबा के इन शब्दों का अर्थ अब सब की समझ में आ गया। ऐसी अद्‌भुत लीला श्री साईबाबा की थी।

डॉक्टर

एक समय एक मामलतदार अपने एक डॉक्टर मित्र के साथ शिरडी पधारे। डॉक्टर का कहना था कि मेरे इष्ट श्रीराम हैं। मैं किसी यवन को मस्तक न नमाऊँगा। अतः वे शिरडी जाने में असहमत थे। मामलतदार ने समझाया कि "तुम्हें नमन करने को कोई

बाध्य न करेगा और न ही तुम्हें कोई ऐसा करने को कहेगा। अतः मेरे साथ चलो, आनन्द रहेगा।" वे शिरडी पहुँचे और बाबा के दर्शन को गये। परन्तु डॉक्टर को ही सबसे आगे जाते देख और बाबा की प्रथम ही चरण-वन्दना करते देख सब को बड़ा विस्मय हुआ। लोगों ने डॉक्टर से अपना निश्चय बदलने और इस भाँति एक यवन को दंडवत् करने का कारण पूछा। डॉक्टर ने बतलाया कि बाबा के स्थान पर उन्हें अपने प्रिय इष्ट देव श्रीराम के दर्शन हुए और इसलिये उन्होंने नमस्कार किया। जब वे ऐसा कह ही रहे थे, तभी उन्हें साईबाबा का रूप पुनः दीखने लगा। वे आश्चर्यचकित होकर बोले- "क्या यह स्वप्न है? ये यवन कैसे हो सकते हैं? अरे! अरे! यह तो पूर्ण योग-अवतार हैं।" दूसरे दिन से उन्होंने उपवास करना प्रारम्भ कर दिया। उन्होंने प्रतिज्ञा की कि जब तक बाबा स्वयं बुलाकर आशीर्वाद नहीं देंगे, तब तक मसजिद में कदापि न जाऊँगा। इस प्रकार तीन दिन व्यतीत हो गये। चौथे दिन उनका एक इष्ट मित्र खानदेश से शिरडी आया। वे दोनों मसजिद में बाबा के दर्शन करने गये। नमस्कार होने के बाद बाबाने डॉक्टर से पूछा, "आपको बुलाने का कष्ट किसने किया? आप यहाँ कैसे पधारे?" यह जटिल और सूचक प्रश्न सुनकर डॉक्टर द्रवित हो गये और उसी रात्रि को बाबा ने उनपर कृपा की। डॉक्टर को निद्रा में ही परमानन्द का अनुभव हुआ। वे अपने शहर लौट आये तो भी उन्हें १५ दिनों तक वैसा ही अनुभव होता रहा। इस प्रकार उनकी साईभक्ति कई गुनी बढ़ गई।

उपर्युक्त कथाओं की शिक्षा, विशेषतः मुले शास्त्री की, यही है कि हमें अपने गुरु में दृढ़ विश्वास होना चाहिये।

अगले अध्याय में बाबा की अन्य लीलाओं का वर्णन होगा।

॥ श्री सद्‌गुरु साईनाथार्पणमस्तु । शुभं भवतु ॥

अध्याय - १३

अन्य कई लीलाएँ-रोगनिवारण (१) भीमाजी पाटील (२) बाला दर्जी (३) बापूसाहेब बूटी (४) आलंदीस्वामी (५) काका महाजनी (६) हरदा के दत्तोपंत।

माया की अभेद्य शक्ति

बाबा के शब्द सदैव संक्षिप्त, अर्थपूर्ण, गूढ़ और विद्वत्तापूर्ण तथा समतोल रहते थे। वे सदा निश्चिंत और निर्भय रहते थे। उनका कथन था कि "मैं फकीर हूँ, न तो मेरे स्त्री ही है और न घर-द्वार ही। सब चिंताओं को त्याग कर, मैं एक ही स्थान पर रहता हूँ। फिर भी माया मुझे कष्ट पहुँचाया करती है। मैं स्वयं को तो भूल चुका हूँ, परन्तु माया को कदापि नहीं भूल सकता, क्योंकि वह मुझे अपने चक्र में फँसा लेती है। श्रीहरि की यह माया ब्रह्मादि को भी नहीं छोड़ती, फिर मुझ सरीखे फकीर का तो कहना ही क्या है? परन्तु जो हरि की शरण लेंगे, वे उनकी कृपा से मायाजाल से मुक्त हो जायेंगे।" इस प्रकार बाबा ने माया की शक्ति का परिचय दिया। भगवान् श्रीकृष्ण भागवत में उद्धव से कहते हैं कि "सन्त मेरे जीवित स्वरूप हैं" और बाबा का भी कहना यही था कि **वे भाग्यशाली, जिनके समस्त पाप नष्ट हो गये हों, वे ही मेरी उपासना की ओर अग्रसर होते हैं। यदि तुम केवल 'साई साई' का ही स्मरण करोगे तो मैं तुम्हें भवसागर से पार उतार दूँगा।** इन शब्दों पर विश्वास करो, तुम्हें अवश्य लाभ होगा। मेरी पूजा के निमित्त कोई सामग्री या अष्टांग योग की भी आवश्यकता नहीं है। मैं तो भक्ति में ही निवास करता हूँ।" अब आगे देखिये कि अनाश्रितों के आश्रयदाता साई ने भक्तों के कल्याणार्थ क्या-क्या किया।

भीमाजी पाटीलः सत्य साई व्रत

नारायण गाँव (तालुका जुन्नर, जिला पूना) के एक महानुभाव भीमाजी पाटील को

सन् १९०९ में वक्षस्थल में एक भयंकर रोग हुआ, जो आगे चल कर क्षय रोग में परिणत हो गया। उन्होंने अनेक प्रकार की चिकित्सा की, परन्तु लाभ कुछ न हुआ। अन्त में हताश होकर उन्होंने भगवान् से प्रार्थना की, "हे नारायण! हे प्रभो! मुझ अनाथ की कुछ सहायता करो!" यह तो विदित ही है कि जब हम सुखी रहते हैं तो भगवत्-स्मरण नहीं करते, परन्तु ज्यों ही दुर्भाग्य घेर लेता है और दुर्दिन आते हैं, तभी हमें भगवान की याद आती है।[१] इसीलिए भीमाजी ने भी ईश्वर को पुकारा। उन्हें विचार आया कि क्यों न साईबाबा के परम भक्त श्री. नानासाहेब चाँदोरकर से इस विषय में परामर्श लिया जाय और इसी हेतु उन्होंने अपनी स्थिति पूर्ण विवरण सहित उनके पास लिख भेजी और उचित मार्गदर्शन के लिये प्रार्थना की। प्रत्युत्तर में श्री. नानासाहेब ने लिख दिया कि "अब तो केवल एक ही उपाय शेष है और वह है साईबाबा के चरणकमलों की शरणागति।" नानासाहेब के वचनों पर विश्वास कर उन्होंने शिरडी-प्रस्थान की तैयारी की। उन्हें शिरडी में लाया गया और मसजिद में ले जाकर लिटाया गया। श्री. नानासाहेब और शामा भी इस समय वहीं उपस्थित थे। बाबा बोले कि "यह पूर्व जन्म के बुरे कर्मों का ही फल है। इस कारण मैं इस झंझट में नहीं पड़ना चाहता। यह सुनकर रोगी अत्यन्त निराश होकर करुणापूर्ण स्वर में बोला कि "मैं बिल्कुल निस्सहाय हूँ और अन्तिम आशा लेकर आपके श्री-चरणों में आया हूँ। आपसे दया की भीख माँगता हूँ। हे दीनों के शरण! मुझ पर दया करो।" इस प्रार्थना से बाबा का हृदय द्रवित हो आया और वे बोले कि "अच्छा, ठहरो! चिन्ता न करो। तुम्हारे दुःखों का अन्त शीघ्र होगा। **कोई कितना भी दुःखित और पीड़ित क्यों न हो, जैसे ही वह मसजिद की सीढ़ियों पर पैर रखता है, वह सुखी हो जाता है।** मसजिद का फकीर बहुत दयालु है और वह तुम्हारा रोग भी निर्मूल कर देगा। वह तो सब लोंगों पर प्रेम और दया रख कर रक्षा करता है।" रोगी को हर पाँचवें मिनट पर खून की उल्टियाँ हुआ करती थीं, परन्तु बाबा के समक्ष उसे कोई उल्टी न हुई। जिस समय से बाबा ने अपने श्री-मुख से आशा और दयापूर्ण शब्दों में उक्त उद्‌गार प्रगट किये, उसी समय से रोग ने भी पल्टा खाया। बाबा ने रोगी को भीमाबाई के घर में ठहरने को कहा। यह स्थान इस प्रकार के रोगी को सुविधाजनक और स्वास्थ्यप्रद तो न था, फिर भी बाबा की आज्ञा कौन टाल सकता था? वहाँ पर रहते हुए बाबा ने दो स्वप्न देकर उसका रोग हरण कर लिया। पहले स्वप्न में रोगी ने देखा कि वह एक विद्यार्थी है और

१. दुख में सुमिरन सब करै, सुख में करै न कोय।
जो सुख में सुमिरन करै, दुख काहे को होय॥

शिक्षक के सामने कविता मुखाग्र न सुना सकने के दण्डस्वरूप बेतों की मार से असहनीय कष्ट भोग रहा है। दूसरे स्वप्न में उसने देखा कि कोई हृदय पर नीचे से ऊपर और ऊपर से नीचे की ओर पत्थर घुमा रहा है, जिससे उसे असह्य पीड़ा हो रही है। स्वप्न में इस प्रकार कष्ट पाकर वह स्वस्थ हो गया और घर लौट आया। फिर वह कभी-कभी शिरडी आता और साईबाबा की दया का स्मरण कर साष्टांग प्रणाम करता था। बाबा अपने भक्तों से किसी वस्तु की आशा न रखते थे। वे तो केवल स्मरण, दृढ़ निष्ठा और भक्ति के भूखे थे। महाराष्ट्र के लोग प्रतिपक्ष या प्रतिमास सदैव सत्यनारायण का व्रत किया करते हैं। परन्तु अपने गाँव पहुँचने पर भीमाजी पाटील ने सत्यनारायण व्रत के स्थान पर एक नया ही **'सत्य साई व्रत'** प्रारम्भ कर दिया।

बाला गणपत दर्जी

एक दूसरे भक्त, जिनका नाम बाला गणपत दर्जी था, एक समय जीर्ण ज्वर से पीड़ित हुए। उन्होंने सब प्रकार की दवाइयाँ और काढ़े लिये, परन्तु इनसे कोई लाभ न हुआ। जब ज्वर तिलमात्र भी न घटा तो वे शिरडी दौड़े आये और बाबा के श्रीचरणों की शरण ली। बाबा ने उन्हें विचित्र आदेश दिया कि "लक्ष्मी मंदिर के पास जाकर एक काले कुत्ते को थोड़ासा दही और चावल खिलाओ।" वे यह समझ न सके कि इस आदेश का पालन कैसे करें? घर पहुँचकर चावल और दही लेकर वे लक्ष्मी मंदिर पहुँचे, जहाँ उन्हें एक काला कुत्ता पूँछ हिलाते हुए दिखा। उन्होंने वह चावल और दही उस कुत्ते के सामने रख दिया, जिसे वह तुरन्त ही खा गया। इस चरित्र की विशेषता का वर्णन कैसे करूँ कि उपर्युक्त क्रिया करने मात्र से ही बाला दर्जी का ज्वर हमेशा के लिये जाता रहा।

बापूसाहेब बूटी

श्रीमान् बापूसाहेब बूटी एक बार अम्लपित्त के रोग से पीड़ित हुए। उनकी आलमारी में अनेक औषधियाँ थीं, परन्तु कोई भी गुणकारी न हो रही थी। बापूसाहेब अम्लपित्त के कारण अति दुर्बल हो गये और उनकी स्थिति इतनी गम्भीर हो गई कि वे अब मसजिद में जाकर बाबा के दर्शन करने में भी असमर्थ थे। बाबा ने उन्हें बुलाकर अपने सम्मुख बिठाया और बोले, "सावधान, अब तुम्हें दस्त न लगेंगे।" अपनी उँगली उठाकर फिर कहने लगे "उलटियाँ भी अवश्य रुक जायेंगी।" बाबा ने ऐसी कृपा की कि रोग समूल नष्ट हो गया और बूटीसाहेब पूर्ण स्वस्थ हो गये।

एक अन्य अवसर पर भी वे हैजा से पीड़ित हो गये। फलस्वरूप उनकी प्यास

अधिक तीव्र हो गई। डॉ. पिल्ले ने हर तरह के उपचार किये, परन्तु स्थिति न सुधरी। अन्त में वे फिर बाबा के पास पहुँचे और उनसे तृषारोग निवारण की औषधि के लिये प्रार्थना की। उनकी प्रार्थना सुनकर बाबा ने उन्हें "मीठे दूध में उबाला हुआ बादाम, अखरोट और पिस्ते का काढ़ा पियो।" – यह औषधि बतला दी।

दूसरा डॉक्टर या हकीम बाबा की बतलाई हुई इस औषधि को प्राणघातक ही समझता, परन्तु बाबा की आज्ञा का पालन करने से यह रोगनाशक सिद्ध हुई और आश्चर्य की बात है कि रोग समूल नष्ट हो गया।

आलंदी के स्वामी

आलंदी के एक स्वामी बाबा के दर्शनार्थ शिरडी पधारे। उनके कान में असह्य पीड़ा थी, जिसके कारण उन्हें एक पल भी विश्राम करना दुष्कर था। उनकी शल्य चिकित्सा भी हो चुकी थी, फिर भी स्थिति में कोई विशेष परिवर्तन न हुआ था। दर्द भी अधिक था। वे किंकर्तव्यविमूढ़ होकर वापिस लौटने के लिये बाबा से अनुमति माँगने गये। यह देखकर शामा ने बाबा से प्रार्थना की कि "स्वामी के कान में अधिक पीड़ा है। आप इन पर कृपा करो।" बाबा आश्वासन देकर बोले, "अल्लाह अच्छा करेगा।" स्वामीजी वापस पूना लौट गये और एक सप्ताह के बाद उन्होंने शिरडी को पत्र भेजा कि "पीड़ा शान्त हो गई है। परन्तु सूजन अभी पूर्ववत् ही है।" सूजन दूर हो जाय, इसके लिये वे शल्यचिकित्सा (ऑपरेशन) कराने बम्बई को गये। शल्यचिकित्सा विशेषज्ञ (सर्जन) ने जाँच करने के बाद कहा कि "शल्यचिकित्सा (ऑपरेशन) की कोई आवश्यकता नहीं।" बाबा के शब्दों का गूढ़ार्थ हम निरे मूर्ख क्या समझें?

काका महाजनी

काका महाजनी नाम के एक अन्य भक्त को अतिसार की बीमारी हो गई। बाबा का सेवा-क्रम कहीं टूट न जाय, इस कारण वे एक लोटा पानी भरकर मसजिद के एक कोने में रख देते थे, ताकि शंका होने पर शीघ्र ही बाहर जा सकें। श्री साईबाबा को तो सब विदित ही था। फिर भी काका ने बाबा को सूचना इसलिये नहीं दी कि वे रोग से शीघ्र ही मुक्ति पा जायेंगे। मसजिद में फर्श बनाने की स्वीकृति बाबा से प्राप्त हो ही चुकी थी, परन्तु जब कार्य प्रारम्भ हुआ तो बाबा क्रोधित हो गये और उत्तेजित होकर चिल्लाने लगे, जिससे भगदड़ मच गई। जैसे ही काका भागने लगे, वैसे ही बाबा ने उन्हें पकड़ लिया और अपने सामने बैठा लिया। इस गड़बड़ी में कोई आदमी मूँगफली की एक छोटी थैली वहाँ भूल गया। बाबा ने एक मुट्ठी मूँगफली उसमें से निकाली और छील

कर दाने काका को खाने के लिये दे दिये। क्रोधित होना, मूँगफली छीलना और उन्हें काका को खिलाना, यह सब कार्य एक साथ ही चलने लगा। स्वयं बाबा ने भी उसमें से कुछ मूँगफली खाई। जब थैली खाली हो गई तो बाबा ने कहा कि मुझे प्यास लगी है। जाकर थोड़ा जल ले आओ। काका एक घड़ा पानी भर लाये और दोनों ने उसमें से पानी पिया। फिर बाबा बोले कि "अब तुम्हारा अतिसार रोग दूर हो गया। तुम अपने फर्श के कार्य की देखभाल कर सकते हो।" थोड़े ही समय में भागे हुए लोग भी लौट आये। कार्य पुनः प्रारम्भ हो गया। काका का रोग अब प्रायः दूर हो चुका था। इस कारण वे कार्य में संलग्न हो गये। क्या मूँगफली अतिसार रोग की औषधि है? इसका उत्तर कौन दे? वर्त्तमान चिकित्सा प्रणाली के अनुसार तो मूँगफली से अतिसार में वृद्धि ही होती है, न कि मुक्ति। इस विषय में सदैव की भाँति बाबा के श्री वचन ही औषधिस्वरूप थे।

हरदा के दत्तोपन्त

हरदा के एक सज्जन, जिनका नाम श्री दत्तोपन्त था, १४ वर्ष से उदररोग से पीड़ित थे। किसी भी औषधि से उन्हें लाभ न हुआ। अचानक कहीं से बाबा की कीर्त्ति उनके कानों में पड़ी कि उनकी दृष्टि मात्र से ही रोगी स्वस्थ हो जाते हैं। अतः वे भी भाग कर शिरडी आये और बाबा के चरणों की शरण ली। बाबा ने प्रेम-दृष्टि से उनकी ओर देखकर आशीर्वाद देकर अपना वरद हस्त उनके मस्तक पर रखा। आशीष और उदी प्राप्त कर वे स्वस्थ हो गये तथा भविष्य में उन्हें फिर कोई पीड़ा न हुई।

इसी तरह के निम्नलिखित तीन चमत्कार इस अध्याय के अन्त में टिप्पणी में दिये गये हैं–

(१) माधवराव देशपांडे बवासीर रोग से पीड़ित थे। बाबा की आज्ञानुसार सोनामुखी का काढ़ा सेवन करने से वे नीरोग हो गये। दो वर्ष पश्चात् उन्हें पुनः वही पीड़ा उत्पन्न हुई। बाबा से बिना परामर्श लिये वे उसी काढ़े का सेवन करने लगे। परिणाम यह हुआ कि रोग अधिक बढ़ गया। परन्तु बाद में बाबा की कृपा से शीघ्र ही ठीक हो गया।

(२) काका महाजनी के बड़े भाई गंगाधरपन्त को कुछ वर्षों से सदैव उदर में पीड़ा बनी रहती थी। बाबा की कीर्त्ति सुनकर वे भी शिरडी आये और आरोग्य-प्राप्ति के लिये प्रार्थना करने लगे। बाबा ने उनके उदर को स्पर्श कर कहा, "अल्लाह अच्छा करेगा।" इसके पश्चात् तुरन्त ही उनकी उदर-पीड़ा मिट गई और वे पूर्णतः स्वस्थ हो गये।

(३) श्री नानासाहेब चाँदोरकर को भी एक बार उदर में बहुत पीड़ा होने लगी। वे दिनरात मछली के समान तड़पने लगे। डॉक्टरों ने अनेक उपचार किये, परन्तु कोई परिणाम न निकला। अन्त में वे बाबा की शरण में आये। बाबाने उन्हें घी के साथ बर्फी खाने की आज्ञा दी। इस औषधि के सेवन से वे पूर्ण स्वस्थ हो गये।

इन सब कथाओं से यही प्रतीत होता है कि सच्ची औषधि, जिससे अनेकों को स्वास्थ्य-लाभ हुआ, वह बाबा के केवल श्रीमुख से उच्चारित वचनों एवं उनकी कृपा का ही प्रभाव था।

॥ श्री सद्‌गुरु साईनाथार्पणमस्तु । शुभं भवतु ॥

• • •

सप्ताह पारायणःद्वितीय विश्राम